आचार्य नरेन्द्रदेव जन्म शताब्दी सम्मेलन

सारनाथ

१ व २ अक्टूबर सन् १९८९ ई०

स्वागत भाषण

अनन्त राम जायसवाल

माननीय सभापति महोदय, देवियों और भाइयों !

आप लोगों ने प्रातः स्मरणीय समाजवाद के जनक श्रद्धेय आचार्य नरेन्द्रदेव जी के जन्म शती सम्मेलन का स्वागताध्यक्ष के रूप में मेरे जैसे एक साधारण कार्यकर्ता को देश के कोने-कोने से आये हुये समाजवादी जनों का स्वागत करने का अवसर प्रदान कर मुझे गौरवान्वित किया है। इस कृपा के लिए मैं आप सब लोगों का कृतज्ञ हूँ।

गंगा के रम्य तट पर बसी शिव की नगरी काशी से कुछ दूर मानवता के सन्देश वाहक करुणा, दया एवं अहिंसा के प्रवर्तक तथागत गौतम बुद्ध की तपोभूमि ऋषिपत्तन में आप महानुभावों का स्वागत करते हुये मुझे असीम हर्ष हो रहा है। यह ऋषिपत्तन वर्तमान में सारनाथ के नाम से प्रसिद्ध है। यह इतिहास प्रसिद्ध ऋषिपत्तन तथागत गौतम बुद्ध के प्रथम "धर्म चक्र प्रवर्तन" के लिए जगविख्यात है। बौद्ध काल में यह ऋषिपत्तन नाम से इसलिए जाना गया क्योंकि ज्ञान-विज्ञान के केन्द्र काशी के निकट होने के कारण यहाँ ऋषि-मुनि निवास करते थे। ऋषिपत्तन के निकट ही मृगदाव नामक मृगों के रहने का वन था जिसका सम्बन्ध बोधिसत्त्व की एक कथा से जोड़ा जाता है। बोधिसत्त्व ने अपने किसी पूर्व जन्म में, जब वे मृगदाव में मृगों के राजा थे, अपने प्राणों की बलि देकर गर्भवती हिरणी की जान बचाई थी। इसी कारण इस वन को सार या सारंग (मृग)—नाथ कहने लगे।

तथागत गौतम बुद्ध गया में ज्ञान प्राप्त करने के अनंतर यहाँ आये और कौंडिन्य आदि अपने पूर्व साथियों को प्रवचन सुनाकर उन्हें दीक्षित किया। इसी प्रथम प्रवचन को उन्होंने "धर्म चक्र प्रवर्तन" कहा जो कालान्तर में भारतीय मूर्ति कला के क्षेत्र में सारनाथ का प्रतीक बन गया।

बुद्ध के ही जीवन काल में काशी के श्रेष्ठी नन्दी ने ऋषिपत्तन में एक बौद्ध बिहार बनवाया था। तीसरी शती ई० पूर्व में देवानाम्प्रिय प्रियदर्शी मगधराज अशोक, जिन्होंने भारत के गौरव को देश-विदेश में फैलाया और जिन्होंने अहिंसा को सर्वप्रथम राजनीति का अंग माना, 'सर्वधर्म समभाव' की नीति का अनुसरण किया और भारतीय अखंडता को प्रबल आधार दिया, अपने राजदर्शन की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए अपने छठे शिलालेख में उद्धृत किया कि "मैं जनता के ऋण से उऋण होना चाहता हूँ तथा जनता को यहाँ सुखी देखना चाहता हूँ तथा परलोक में भी।" उनके शिलालेखों तथा स्तम्भ लेखों में उद्धृत विचार आज भी प्रासंगिक प्रतीत होते हैं। प्रसिद्ध इतिहासकार प्रो० मुकर्जी ने ठीक ही कहा है कि अशोक के कार्य तथा उनका चिन्तन समय से बहुत आगे था। अशोक ने इस ऋषिपत्तन की यात्रा भी की और यहाँ कई स्तूप और एक लघु स्तम्भ लेख स्थापित किया। इसी स्तम्भ का सिंहशीर्ष तथा धर्मचक्र को आचार्य नरेन्द्रदेव जी की प्रेरणा से भारतीय गणराज्य का राजचिह्न बनाया गया है।

चीनी यात्री फाह्यान चौथी शती ई० में इसी स्थान पर आया। उसने सारनाथ में चार बड़े स्तूप और ५ विहार देखे थे। ७वीं शती ई० के पूर्वार्ध में प्रसिद्ध चीनी यात्री युवान च्वांग ने सारनाथ की यात्रा की। उसने ३० बौद्ध विहारों का उल्लेख किया जिसमें १५०० थेरवादी भिक्षु निवास करते थे। उसने यहाँ १०० हिन्दू देवालय भी देखे जो कालान्तर में काल कवलित हो गये। वे आज एक खण्डहर के रूप में विद्यमान हैं। चौखण्डी स्तूप पर महान सम्राट अकबर ने १५८८ ई० में फारसी में एक अभिलेख खुदवाया जिसमें हूँमायूँ के आने और विश्राम करने का उल्लेख है। लंका के अनागारिक धर्मपाल के प्रयत्नों से मूलगन्ध कुटी विहार नामक बौद्ध मन्दिर बना।

सारनाथ में खुदाई से अनेक गुप्त कालीन कला कृतियाँ तथा बुद्ध प्रतिमायें प्राप्त हुई थीं जो आज वर्तमान संग्रहालय में सुरक्षित हैं। गुप्त-काल में सारनाथ की मूर्तिकला की एक अलग शैली प्रचलित थी जो बुद्ध की मूर्तियों के आत्मिक सौन्दर्य तथा शारीरिक सौष्ठव की सम्मिलित भाव योजना के लिए भारतीय मूर्तिकला के इतिहास में प्रसिद्ध है। यहाँ एक प्राचीन शिवमन्दिर तथा जैन मन्दिर भी स्थित है। जैन मन्दिर १८२४ ई० में बना जिसमें श्रियांशदेव की प्रतिमा है।

सारनाथ अपने प्राचीन गौरव को उजागर करते हुये 'सर्वधर्म सम-भाव' का सन्देश दे रहा है तथा प्राचीन भारतीय संस्कृति की निरन्तर प्रवाहित होने वाली धारा की वैचारिक एवं सैद्धान्तिक गति देते हुए आज भी नवीनता का प्रतीक एवं भारतीयों के आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है। तिब्बत के धर्म गुरू दलाई लामा के नेतृत्व में माननीय रिनपोछे की देख-रेख में अन्तर्राष्ट्रीय उच्च शिक्षा का केन्द्र तिब्बती संस्थान सारनाथ में बना हुआ है। आज भी वे बौद्ध भिक्षु हमारी प्राचीन परम्परा एवं संस्कृति का उद्‌घोष कर रहे हैं। इस ऐतिहासिक स्थल पर हम आपका स्वागत करते हैं।

इस सम्मेलन की विशेषता यह है कि इसके पीछे प्रेरणा तो हमारे वरिष्ठ साथी, मित्र और नेता श्री चन्द्रशेखर जी की है। लेकिन इसके लिये जन, धन और अन्न आदि जुटाकर आपने सम्मेलन को विराट रूप दिया और सफल बनाया। आपकी जितनी प्रशंसा की जाय कम है। आपके सहयोग और सहायता के लिये मैं आप सबको धन्यवाद देता हूँ।

सम्मेलन ने आचार्य नरेन्द्रदेव के विचारों व महान व्यक्तित्व को जानने और समझने वाले राजनेताओं तथा विद्वानों को आकर्षित किया और वे बड़ी संख्या में हमारे बीच विद्यमान हैं। उनके दर्शन से हम आनन्दित हो रहे हैं और अपने को धन्य समझ रहे हैं।

यह छोटे मुँह बड़ी बात ही होगी कि इतने बड़े विद्वानों के बीच मैं आचार्य जी पर अपनी जुबान चलाऊँ। परन्तु आचार्य जी की पुण्य स्मृति में श्रद्धांजिल अर्पित करने की अपनी इच्छा और चाह का मैं संवरण नहीं कर पा रहा हूँ। यह मेरी धृष्टता ही होगी और इसके लिए मैं विनम्रता-पूर्वक विद्वतजनों और आप सबसे क्षमा प्रार्थी हूँ।

आचार्य जी प्राच्य और पाश्चात्य के सम्मिश्रण थे। अपने इतिहास, संस्कृति और साहित्य में देश और काल से परे शाश्वत सत्य, शिव और सुन्दर जो भी सारतत्त्व हैं वह सब आचार्य जी में कूट-कूट कर भरे हुये थे। वह अनासक्ति, आत्म-त्याग, करुणा, दया, सादगी, अहिंसा और परसेवा की प्रतिमूर्ति थे। ये सद्गुण उनके जीवन का अंग और अंश बन गये थे। दूसरी तरफ उन पर योरोप के महान दार्शनिक मार्क्स की जबर-दस्त छाप थी। यह स्वाभाविक भी था। अंग्रेज साम्राज्यशाही के शिकंजे में जकड़े हुये गुलाम हिन्दुस्तान के जन साधारण अमानुषिक शोषण और अत्याचार के कारण घोर गरीबी से जीते जी निर्जीव थे और उद्धार के लिये राष्ट्रीय स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ रहे थे। मार्क्स अकेले पहले व्यक्ति थे जो सारी दुनिया के गरीबों और सर्वहारा वर्ग के लिये इतने जबरदस्त ढ़ंग से बोले कि उसकी गूँज सारी दुनियाँ ने सुनी। विद्या और ज्ञान के पिपासु और जुझारू आचार्य नरेन्द्रदेव उससे प्रभावित होने से बच न पाये और मार्क्स के सिद्धान्त व दर्शन को कायल होकर अपनाया। अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक वह गर्व के साथ मार्क्सवादी रहे।

आचार्य जी के जीवन के दो सुस्पष्ट लक्ष्य थे—राष्ट्रीय स्वतन्त्रता और समाजवादी समाज की स्थापना। पहला लक्ष्य प्राप्त करने में वह अपने जीवन में ही सफल हुए और दूसरे की प्राप्ति के लिये संघर्ष करते हुये अपने प्राण छोड़े। समाजवाद की स्थापना के लिये वह स्वतन्त्रता को
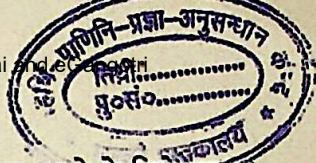
आवश्यक समझते थे और स्वतंत्रता संग्राम को पुष्ट करने के लिये समाज-वाद को। वह किसानों, मजदूरों और युवजनों के जीवंत और संघर्षशील बड़े संगठनों द्वारा स्वतंत्रता संग्राम को पुष्ट करने के लिये बराबर बल देते रहे और प्रयास करते रहे।

काशी विद्यापीठ, लखनऊ विश्वविद्यालय तथा काशी विश्वविद्यालय के उपकुलपति होने के नाते आचार्य जी को युवजनों के संपर्क का अवसर मिला। उनके पाण्डित्य व विद्वत्ता की धाक तो थी ही, उनके चुम्बकीय व्यक्तित्व का आकर्षण भी इतना अधिक था कि जो उनसे मिला, उनकी तरफ खिच गया। वह युवजनों को इस तरह शिक्षित व प्रशिक्षित करते थे कि वह एक तरफ समाजवाद के संघर्ष के हरावल दस्ता बनें तो दूसरी तरफ सत्ता प्राप्ति पर योग्य शासक बनें। काश ! वैसा शिक्षण व प्रशिक्षण आज भी चलता होता।

आचार्य जी दृढ़ संकल्पी थे। उन्होंने न तो अपने सिद्धान्तों और आदर्शों के साथ समझौता किया और न कभी अंग्रेजों के साथ लड़ाई में ही समझौतावादी रुख अपनाया। उन्होंने जो राह अपनाई वह कंटकाकीर्ण ही थी, लेकिन वह उसी राह पर दृढ़ता से चलते रहे। ऐसे दृढ़ संकल्पी महा-पुरुषों का यही नसीब होता है कि वह एक साथ कट्टर अनुयायी व कट्टर शत्रु दोनों बनाते हैं। १९४६ ई० में वह कांग्रेस के टिकट पर उत्तर प्रदेश विधान सभा के सदस्य चुने गये थे। लेकिन १९४८ ई० में जब कांग्रेस को त्याग कर सोशलिस्ट पार्टी ने अपना अलग अस्तित्व कायम किया तो आचार्य जी ने विधान सभा की सदस्यता त्याग दी और फैजाबाद से उप-चुनाव लड़े। उसमें उनको पं० गोविन्द बल्लभ पन्त जैसे कांग्रेस के पुराने साथियों व मित्रों का भी विरोध सहना पड़ा। उनके दुष्प्रचार का दुष्प्रभाव चुनाव के नतीजे पर पड़ा। आचार्य जी चुनाव हार गये। आचार्य जी अवसरवादी दलबदल की अपेक्षा आजाद हिन्दुस्तान में दल त्याग के साथ

धारा सभा की सदस्यता त्याग की स्वस्थ परम्परा की नींव डाल रहे थे जो कांग्रेसियों को नहीं भाई। दूसरी तरफ विधान सभा भी आचार्य जी के आदर्श और विचारों के लाभ से वंचित हुई।

आचार्य जी का शरीर व स्वास्थ्य स्थायी रूप से जर्जर था। लेकिन उनकी जिन्दादिली और हाजिर जवाबी ने उनका साथ कभी नहीं छोड़ा। अपने इन गुणों के कारण वह सदा सर्वदा युवा रहे, सदाबहार रहे।

मैं पूरे जोर के साथ कहना चाहता हूँ कि आज जबकि किसान, मजदूर, युवा और महिलाएँ, सबके सब जाति व सम्प्रदाय के अलग-अलग कठघरों में बँट गये हैं और वर्ग संघर्ष के स्थान पर जाति व सम्प्रदाय के देश तोड़क झगड़े आ गये हैं, तो ऐसी स्थिति में आचार्य जी के शिक्षाओं, विचारों व आदर्शों की सबसे ज्यादा आवश्यकता है। लेकिन देश और युवा पीढ़ी उनसे अनभिज्ञ है। वर्तमान में विचार व सिद्धांत की जगह अवसरवाद और व्यक्तिवाद पनप रहे हैं। इसलिये इस सम्मेलन को अपने कर्तव्य की इतिश्री न समझा जाय। युग पुरुषों गाँधी जी, आचार्य जी, डाक्टर लोहिया और जय प्रकाश नारायण के विचारों के प्रचार व प्रसार के लिये पुस्तक, पुस्तिकायें, जनअभिलेख, पत्र व पत्रिकायें फिर से लिखे व पढ़े जाँय। वर्ग संघर्ष तेज करने व पिछड़ों व महिलाओं को विशेष अवसर देने और आदमी-आदमी के बीच का भेदभाव मिटाने लायक संगठन खड़ा किया जाय। यही आचार्य जी के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी और ऐसा करके ही यह सम्मेलन इतिहास में अपना स्थान बनाएगा।

आचार्य जी को हम फिर से नहीं पा सकते। लेकिन उनके विचारों व कृत्यों की थाती तो हमारे पास है। आज हम संकल्प लें कि उनको हम जानेंगे और आगे बढ़ायेंगे। हमें आशा है कि श्री चन्द्रशेखर जी इसमें भी प्रेरणा देंगे और अगुवाई करेंगे। उनकी क्षमता पर हमें पूरा भरोसा है।

मैं आशा करता हूँ कि इस कार्य में यहाँ पर एकत्र विद्वत समाज उनका हाथ बँटायेगा ।

इन शब्दों के साथ मैं आचार्य जी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ ।

यहाँ के प्रवास में आपको कोई कमी लगे या असुविधा हो, जो होगी ही क्योंकि आपके लायक प्रबन्ध हमसे बन नहीं पाया । इसके लिये मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ ।

आपका पुनः स्वागत ! बारंबार स्वागत !

विनीत :

अनन्त राम जायसवाल

युवक शक्ति का भण्डार होता है।

—आचार्य जी

शिक्षा ही जनतंत्र की आधारशिला है और इसकी सफलता शिक्षक पर निर्भर है।

—आचार्य जी

नवीन समाज की नींव योग्य अध्यापक वर्ग है।

—आचार्य जी

स्त्री जाति की उत्साहपूर्ण क्रियाशीलता के विना कोई भी महान सामाजिक परिवर्तन सम्भव नहीं है।

—आचार्य जी
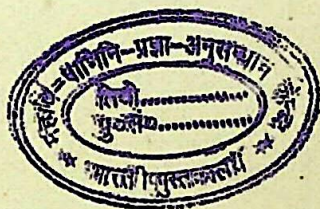
मेरे जीवन के कुछ ही वर्ष रह ग
नहीं है किन्तु मन में अब भी
मुदँगी मुझे एक परितोष होगा
में किया है वह स्थायी है। वि
और इसी के आधार पर मेरा
सर्वथा सत्य है।

— आ

समाजवाद ही पूर्ण लोकतंत्र है। लोकतंत्र तो समाजवाद का प्राण ही है।

—आचार्य जी

जहाँ समाजवाद के बिना लोकतंत्र अपूर्ण है वहाँ लोकतंत्र के बिना समाजवाद असम्भव है।

—आचार्य जी

मानवता ही समाजवाद का आधार है तथा समाजवाद ही श्रेणी विहीन समाज, नैतिकता एवं सामाजिक न्याय की स्थापना कर सकता है।

— आचार्य जी

जनतांत्रिक समाजवाद एक जीवन प्रणाली और विश्व-व्यापी सांस्कृतिक आन्दोलन है।

—आचार्य जी

आचार्य नरेन्द्र देव जी के विचार डॉ० परमानन्द द्वारा संकलित तथा सीमा प्रेस, ईश्वरगंगी, वाराणसी द्वारा मुद्रित।